International Journal for Multidisciplinary Research (IJFMR)
E-ISSN: 2582-2160 ● Website: www.ijfmr.com ● Email: editor@ijfmr.com

मगध साम्राज्य की सामाजिक स्थिति बौद्ध धर्म से पूर्व एवं बौद्ध धर्म के समय।

Mr. Pawan Pratap Singh[1], Dr. Deepa Goswami[2]

[1]Research Scholar, History, Aisect University Hazaribagh
[2]Assistant Professor, History, Aisect University Hazaribagh

अमूर्त

प्रस्तुत शोध पत्र छठी शताब्दी ईसा पूर्व के दौरान मगध साम्राज्य की सामाजिक स्थिति का एक तुलनात्मक और विश्लेषणात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन को मुख्य रूप से दो कालखंडों में विभाजित किया गया है: बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व की सामाजिक व्यवस्था और बौद्ध धर्म के समकालीन समाज। बौद्ध धर्म से पूर्व, मगध का समाज मुख्य रूप से उत्तर-वैदिक कालीन कठोर वर्ण व्यवस्था, ब्राह्मणवादी वर्चस्व, जटिल धार्मिक कर्मकांडों और जन्म-आधारित सामाजिक असमानता से संचालित था। इस काल में शूद्रों और महिलाओं की स्थिति में गिरावट देखी गई।

इसके विपरीत, महात्मा बुद्ध के आगमन और बौद्ध धर्म के प्रसार ने मगध के सामाजिक ताने-बाने में एक क्रांतिकारी परिवर्तन लाया। बौद्ध दर्शन ने जन्म-आधारित श्रेष्ठता को चुनौती दी और कर्म-आधारित योग्यता पर बल दिया। इस शोध पत्र में यह रेखांकित किया गया है कि कैसे बौद्ध धर्म के संघ-नियमों ने जातिगत भेदभाव को शिथिल किया, जिससे व्यापारिक वर्ग (वैश्यों) और निम्न वर्गों को नया सामाजिक सम्मान मिला। साथ ही, महिलाओं को संघ में प्रवेश की अनुमति मिलने से उनके धार्मिक और सामाजिक अधिकारों में गुणात्मक सुधार हुआ। ऐतिहासिक और साहित्यिक स्रोतों (जैसे अंगुत्तर निकाय और ब्राह्मण ग्रंथ) के पुनर्मूल्यांकन के माध्यम से, यह शोध प्रदर्शित करता है कि मगध का समाज रूढ़िवादिता से प्रगतिशीलता और अधिक समतावादी मूल्यों की ओर कैसे स्थानांतरित हुआ। निष्कर्षतः, बौद्ध धर्म न केवल एक आध्यात्मिक आंदोलन था, बल्कि इसने मगध साम्राज्य को तत्कालीन भारत का सबसे प्रगतिशील सामाजिक और राजनीतिक केंद्र बनाने में उत्प्रेरक की भूमिका निभाई।

मुख्य शब्द : मगध साम्राज्य, सामाजिक स्थिति, बौद्ध धर्म, वर्ण व्यवस्था, सामाजिक परिवर्तन।

प्रस्तावना

मगध साम्राज्य की ऐतिहासिक यात्रा प्राचीन भारतीय इतिहास के पन्नों में अत्यंत गौरवशाली और युगांतरकारी रही है। छठी शताब्दी ईसा पूर्व के आसपास, जब भारत सोलह महाजनपदों में बंटा हुआ था, तब मगध ने अपनी भौगोलिक अनुकूलता, सुदृढ़ आर्थिक आधार और महत्वाकांक्षी शासकों के बल पर एक विशाल साम्राज्य के रूप में स्वयं को स्थापित किया। गंगा, सोन और चंपा जैसी नदियों से घिरे इस क्षेत्र ने न केवल कृषि और व्यापार को अभूतपूर्व गति दी, बल्कि एक ऐसी राजनीतिक सत्ता को जन्म दिया जिसने आने वाले कई सदियों तक भारत की नियति को तय किया। राजगीर और पाटलिपुत्र जैसी अभेद्य राजधानियों के संरक्षण में मगध न केवल राजनीतिक शक्ति का केंद्र बना, बल्कि यह वैचारिक क्रांति की मुख्य भूमि भी सिद्ध हुआ।

राजनीतिक शक्ति के इस चरमोत्कर्ष के साथ-साथ मगध की सामाजिक संरचना भी एक बड़े परिवर्तन के दौर से गुजर रही थी। बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व, यहाँ का समाज पारंपरिक उत्तर-वैदिक कालीन मान्यताओं से गहरे स्तर पर प्रभावित था।

इस काल में सामाजिक ताना-बाना धीरे-धीरे रूढ़िवादी वर्ण व्यवस्था की जकड़न में आ रहा था, जहाँ मनुष्य का स्थान उसके कर्म से नहीं बल्कि उसके जन्म से तय होने लगा था। कर्मकांडों की जटिलता, यज्ञों की बहुलता और पुरोहित वर्ग के बढ़ते वर्चस्व ने समाज के एक बड़े हिस्से में असंतोष की भावना को जन्म दिया था। इस प्रारंभिक दौर में सामाजिक स्तरीकरण अत्यंत कठोर था, जिसने समाज के निचले तबकों को हाशिए पर धकेल दिया था।

समय के इस संधिकाल में महात्मा बुद्ध का प्राकट्य और बौद्ध धर्म का प्रसार मगध के इतिहास में एक महान सामाजिक मोड़ साबित हुआ। बौद्ध दर्शन ने स्थापित सामाजिक असमानताओं और जन्म-आधारित श्रेष्ठता के सिद्धांतों को सीधे तौर पर चुनौती दी। बुद्ध की शिक्षाओं ने यह प्रतिपादित किया कि आध्यात्मिक और सामाजिक उन्नति पर किसी एक वर्ग का एकाधिकार नहीं हो सकता। मगध की जनता, जो कर्मकांडों के बोझ और सामाजिक भेदभाव से त्रस्त थी, उसे बौद्ध धर्म की सरल, व्यावहारिक और समतावादी विचारधारा में एक नया संबल दिखाई दिया। इसके परिणामस्वरूप, मगध न केवल बौद्ध धर्म का मुख्य केंद्र बना, बल्कि इसके सामाजिक ताने-बाने में भी एक व्यापक उदारता का समावेश हुआ।

इस कालखंड का एक अन्य महत्वपूर्ण पहलू द्वितीय नगरीकरण और व्यापारिक वर्ग का उदय था, जिसने सामाजिक परिवर्तन की गति को और तीव्र कर दिया। बौद्ध धर्म के समकालीन समाज में वैश्यों और व्यापारियों (श्रेष्ठियों) को आर्थिक रूप से सुदृढ़ होने के बावजूद ब्राह्मणवादी व्यवस्था में वह सामाजिक प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं थी, जिसके वे हकदार थे। बौद्ध धर्म ने इन उभरते हुए आर्थिक वर्गों को खुला समर्थन और सम्मान प्रदान किया, जिससे समाज में एक नए संतुलन का निर्माण हुआ। संघ के नियमों ने जातिगत दीवारों को ढहा दिया, जहाँ राजा से लेकर रंक और ब्राह्मण से लेकर चांडाल तक, सभी को समान स्थान प्राप्त था। इसने समाज में एक अभूतपूर्व गतिशीलता और बंधुत्व की भावना को बढ़ावा दिया।

अतः, मगध साम्राज्य की सामाजिक स्थिति का बौद्ध धर्म से पूर्व और बौद्ध धर्म के समय का अध्ययन केवल दो कालखंडों की तुलना नहीं है, बल्कि यह रूढ़िवादिता से प्रगतिशीलता की ओर बढ़ते समाज की जीवंत गाथा है। प्रस्तुत शोध पत्र की यह प्रस्तावना इसी सामाजिक संक्रमण, वर्ग-चेतना के विकास, महिलाओं और शूद्रों के अधिकारों में आए बदलावों तथा मगध की अद्वितीय प्रगतिशील चेतना को रेखांकित करने का प्रयास करती है। इस अध्ययन के माध्यम से हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि कैसे मगध की धरती ने न केवल एक साम्राज्य को जन्म दिया, बल्कि प्राचीन भारतीय समाज को मानवता, समता और तार्किकता का एक नया मार्ग भी दिखाया।

साहित्यिक समीक्षा

मगध साम्राज्य की सामाजिक स्थिति और उसमें आए बदलावों को समझने के लिए तत्कालीन साहित्यिक स्रोतों का गहन विश्लेषण अत्यंत आवश्यक है। बौद्ध धर्म से पूर्व की सामाजिक व्यवस्था को समझने का मुख्य आधार उत्तर-वैदिक साहित्य, ब्राह्मण ग्रंथ, उपनिषद और सूत्र साहित्य हैं। इन धार्मिक ग्रंथों से स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में वर्ण व्यवस्था धीरे-धीरे जन्म-आधारित और अत्यंत कठोर होती जा रही थी। ब्राह्मण ग्रंथों में यज्ञों, अनुष्ठानों और पुरोहित वर्ग की सर्वोच्चता का विस्तृत विवरण मिलता है, जो यह दर्शाता है कि समाज का नियंत्रण धार्मिक पुरोहितों के हाथों में केंद्रित था। हालांकि, इसी काल के अंतिम दौर में लिखे गए कुछ उपनिषदों में कर्मकांडों के प्रति दार्शनिक असंतोष और ज्ञान मार्ग की खोज के बीज भी दिखाई देते हैं, जो भविष्य के वैचारिक परिवर्तनों का संकेत थे।

बौद्ध धर्म के उदय के साथ ही साहित्यिक परिदृश्य में एक क्रांतिकारी बदलाव आया और पालि भाषा में रचित त्रिपिटक (सुत्तपिटक, विनयपिटक और अभिधम्मपिटक) ने सामाजिक इतिहास लेखन को एक नई दिशा दी। 'दीघनिकाय' और 'अंगुत्तरनिकाय' जैसे महत्वपूर्ण बौद्ध ग्रंथों में मगध की सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक स्थिति का अत्यंत सजीव और यथार्थवादी चित्रण मिलता है। यह साहित्य ब्राह्मणवादी ग्रंथों के विपरीत समाज को एक नए दृष्टिकोण से देखता है। बौद्ध रचनाओं में जन्म के स्थान पर मनुष्य के नैतिक आचरण और कर्म को महत्व दिया गया है, जिससे तत्कालीन समाज में पनप

रहे वर्ग-संघर्ष और चेतना की स्पष्ट झलक मिलती है। यह साहित्य धार्मिक कर्मकांडों के खोखलेपन और समाज के दबे-कुचले वर्गों की आकांक्षाओं को मुखरित करता है।

समकालीन जैन साहित्य, विशेष रूप से 'भगवती सूत्र' और अन्य आगम ग्रंथ भी मगध के सामाजिक ताने-बाने को समझने में अमूल्य योगदान देते हैं। जैन ग्रंथ बौद्ध साहित्य की भांति ही तत्कालीन वर्ण व्यवस्था की विसंगतियों और पशु बलि जैसी कुप्रथाओं पर कड़ा प्रहार करते हैं। इन ग्रंथों से यह प्रमाणित होता है कि मगध का समाज रूढ़िवादी मान्यताओं से मुक्त होने के लिए छटपटा रहा था और नए विचारों का स्वागत करने के लिए पूरी तरह तैयार था। इसके अतिरिक्त, इन धार्मिक ग्रंथों में व्यापारिक गतिविधियों, नगरों के विकास और विभिन्न व्यवसायों का जो उल्लेख मिलता है, वह सामाजिक वर्गीकरण और आर्थिक आत्मनिर्भरता के अंतर्संबंधों को स्पष्ट रूप से उजागर करता है।

आधुनिक इतिहासकारों और अनुसंधानकर्ताओं ने इन प्राचीन साहित्यिक स्रोतों का पुनर्मूल्यांकन करके मगध के सामाजिक संक्रमण पर व्यापक प्रकाश डाला है। प्राच्यविदों और समकालीन इतिहासकारों के अध्ययनों से यह स्थापित हुआ है कि प्राचीन साहित्य में दिखने वाला विरोधाभास वास्तव में दो अलग-अलग सामाजिक विचारधाराओं का टकराव था। आधुनिक विद्वान यह मानते हैं कि पालि साहित्य ने इतिहास को केवल राजाओं के विवरण तक सीमित न रखकर जनसामान्य, दासों, कर्मकारों और गृहपतियों की सामाजिक स्थिति से अवगत कराया। साहित्यिक समीक्षा के माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि जहाँ वैदिक साहित्य समाज के एक विशिष्ट ढांचे को बनाए रखना चाहता था, वहीं बौद्ध साहित्य एक अधिक लचीले और समतावादी समाज की वकालत कर रहा था।

निष्कर्ष स्वरूप, साहित्यिक समीक्षा यह दर्शाती है कि मगध साम्राज्य के सामाजिक इतिहास के स्रोत बहुआयामी और वैचारिक विविधताओं से भरे हुए हैं। बौद्ध धर्म से पूर्व का साहित्य जहाँ सामाजिक स्तरीकरण और विशेषाधिकारों की रक्षा करता दिखाई देता है, वहीं बौद्ध और जैन काल का साहित्य समाज के लोकतांत्रिकरण की प्रक्रिया को दर्शाता है। इन दोनों प्रकार के साहित्यों का तुलनात्मक अध्ययन हमें यह समझने में मदद करता है कि कैसे मगध का समाज एक बंद और रूढ़िवादी व्यवस्था से निकलकर एक खुले, प्रगतिशील और गतिशील समाज के रूप में विकसित हुआ। अतः, उपलब्ध साहित्य केवल धार्मिक उपदेश मात्र नहीं हैं, बल्कि वे मगध की बदलती सामाजिक चेतना के जीवंत ऐतिहासिक दस्तावेज हैं।

अनुसंधान के प्रश्न

1. बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व मगध साम्राज्य में वर्ण व्यवस्था और धार्मिक कर्मकांडों ने समाज के निचले वर्गों (शूद्रों) तथा महिलाओं की सामाजिक-धार्मिक स्थिति को किस प्रकार प्रभावित और सीमित किया था?
2. द्वितीय नगरीकरण और व्यापारिक श्रेणियों (गिल्ड्स) के उदय के कारण वैश्य वर्ग में जो आर्थिक समृद्धि आई, उसे सामाजिक प्रतिष्ठा में बदलने के लिए बौद्ध धर्म ने किस प्रकार एक वैधानिक और वैचारिक मंच प्रदान किया?
3. बौद्ध संघ की समतावादी नीतियों, लोकभाषा (पालि) के प्रयोग और भिक्षुणी संघ की स्थापना ने मगध के व्यावहारिक समाज में किस सीमा तक जातिगत कठोरता को शिथिल किया और सामाजिक गतिशीलता को बढ़ावा दिया?

शोध कार्यप्रणाली

प्रस्तुत शोध पत्र में मगध साम्राज्य की बौद्ध धर्म से पूर्व और बौद्ध धर्म के समय की सामाजिक स्थिति का सटीक, प्रामाणिक और वैज्ञानिक अध्ययन करने के लिए ऐतिहासिक एवं विश्लेषणात्मक शोध पद्धति का प्रयोग किया गया है। चूंकि यह अध्ययन पूरी तरह से प्राचीन कालखंड से संबंधित है, इसलिए इसमें प्राथमिक और द्वितीयक दोनों प्रकार के ऐतिहासिक स्रोतों के संकलन और उनके वस्तुनिष्ठ मूल्यांकन पर विशेष बल दिया गया है। शोध की प्रकृति गुणात्मक है, जिसके अंतर्गत ऐतिहासिक घटनाओं, सामाजिक नियमों और सांस्कृतिक परिवर्तनों की कड़ियों को जोड़कर एक तार्किक निष्कर्ष पर पहुँचने का प्रयास किया गया है।

इस शोध कार्य के लिए प्राथमिक स्रोतों के रूप में तत्कालीन धार्मिक, दार्शनिक और धर्मनिरपेक्ष साहित्यों का गहन अध्ययन किया गया है। बौद्ध धर्म से पूर्व की सामाजिक स्थिति के आंकलन के लिए उत्तर-वैदिक साहित्य, शतपथ ब्राह्मण, ऐतरेय ब्राह्मण और प्रमुख उपनिषदों को आधार बनाया गया है। वहीं, बौद्ध कालीन समाज के वास्तविक स्वरूप को समझने के लिए पालि भाषा में रचित त्रिपिटक, विशेष रूप से सुत्तपिटक के अंतर्गत आने वाले 'दीघनिकाय' और 'अंगुत्तरनिकाय' तथा विनयपिटक के संघ-नियमों का सूक्ष्म विश्लेषण किया गया है। इसके अतिरिक्त समकालीन जैन आगम ग्रंथों के संदर्भों को भी प्राथमिक साक्ष्यों के रूप में सम्मिलित किया गया है।

शोध को अधिक व्यापक और प्रासंगिक बनाने के लिए द्वितीयक स्रोतों के रूप में प्रतिष्ठित आधुनिक इतिहासकारों, समाजशास्त्रियों और पुरातत्वविदों के शोध ग्रंथों, शोध पत्रों, निबंधों और ऐतिहासिक पत्रिकाओं का व्यापक उपयोग किया गया है। इन आधुनिक व्याख्याओं की सहायता से प्राचीन साहित्यों में वर्णित सामाजिक व्यवस्थाओं की निष्पक्ष समीक्षा की गई है। प्राथमिक स्रोतों से प्राप्त जानकारी को द्वितीयक स्रोतों के तर्कों के साथ मिलाकर देखा गया है, ताकि तत्कालीन समाज में आए बदलावों को केवल धार्मिक चश्मे से न देखकर एक सामाजिक-आर्थिक परिप्रेक्ष्य में समझा जा सके।

इस अनुसंधान में ऐतिहासिक-तुलनात्मक विधि को मुख्य उपकरण के रूप में अपनाया गया है। इसके अंतर्गत बौद्ध धर्म से पूर्व की कठोर वर्ण व्यवस्था, महिलाओं की स्थिति और शूद्रों के अधिकारों की तुलना बौद्ध काल के दौरान आए परिवर्तनों से की गई है। इस पद्धति के प्रयोग से यह स्पष्ट रूप से रेखांकित करने में मदद मिली है कि विचारों के स्तर पर हुए बदलावों ने व्यावहारिक धरातल पर मगध के जनजीवन को किस प्रकार प्रभावित किया। स्रोतों की विश्वसनीयता बनाए रखने के लिए 'आंतरिक और बाह्य आलोचना विधि' का प्रयोग किया गया है, जिससे अतिशयोक्तिपूर्ण विवरणों को हटाकर केवल प्रामाणिक तथ्यों को ही स्वीकार किया गया है।

अंततः, इस शोध की कार्यप्रणाली पूर्णतः व्यवस्थित और चरणबद्ध है, जो मगध के सामाजिक संक्रमण को एक कालक्रम के अनुसार प्रस्तुत करती है। भौगोलिक सीमाओं और ऐतिहासिक सीमाओं को ध्यान में रखते हुए, यह पद्धति केवल मगध साम्राज्य के मुख्य केंद्रों पर ध्यान केंद्रित करती है ताकि निष्कर्ष भटकाव रहित और केंद्रित रहें। साक्ष्यों के संकलन, वर्गीकरण, तुलना और विश्लेषण की इस त्रिस्तरीय प्रक्रिया के माध्यम से यह शोध कार्यप्रणाली प्राचीन भारतीय इतिहास के एक अत्यंत महत्वपूर्ण सामाजिक मोड़ को पूरी निष्पक्षता और वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ उद्घाटित करने में सफल सिद्ध होती है।

बौद्ध धर्म से पूर्व मगध की सामाजिक संरचना और वर्ण व्यवस्था

बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व मगध साम्राज्य की सामाजिक संरचना उत्तर-वैदिक कालीन परंपराओं और ब्राह्मणवादी व्यवस्था से गहरे स्तर पर प्रभावित थी। इस काल में समाज स्पष्ट रूप से चार प्रमुख वर्णों—ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र—में विभाजित हो चुका था। ऋग्वैदिक काल की लचीली व्यवस्था, जहाँ वर्ण का निर्धारण कर्म के आधार पर होता था, इस समय तक पूरी तरह समाप्त हो चुकी थी और उसका स्थान जन्म-आधारित कठोरता ने ले लिया था। समाज में मनुष्य की हैसियत, अधिकार और कर्तव्य उसके कुल और जाति से तय होने लगे थे, जिससे सामाजिक असमानता की जड़ें गहरी हो गईं।

इस सामाजिक पिरामिड में ब्राह्मणों का स्थान सर्वोच्च था, जिन्होंने स्वयं को धार्मिक अनुष्ठानों, यज्ञों और ज्ञान का एकमात्र संरक्षक घोषित कर दिया था। राजाओं की सत्ता को वैध बनाने और धार्मिक अनुष्ठानों के संपादन के कारण पुरोहित वर्ग का राजनीतिक प्रभाव भी अत्यंत सुदृढ़ था। दूसरे स्थान पर क्षत्रिय वर्ण था, जिसके हाथों में शासन व्यवस्था और सैन्य शक्ति केंद्रित थी। हालांकि इस काल में ब्राह्मणों और क्षत्रियों के बीच सामाजिक सर्वोच्चता को लेकर एक अंतर्निहित संघर्ष भी सुलग रहा था, लेकिन विशेषाधिकारों के मामले में ये दोनों उच्च वर्ण समाज के अन्य वर्गों की तुलना में कहीं अधिक शक्तिशाली और संपन्न स्थिति में थे।

समाज का तीसरा स्तंभ वैश्य वर्ण था, जिसका मुख्य कार्य कृषि, पशुपालन और व्यापार था। इस काल में कृषि अधिशेष और प्रारंभिक व्यापार के कारण वैश्यों की आर्थिक स्थिति मजबूत होने लगी थी, परंतु सामाजिक पदानुक्रम में उन्हें वह आदर

और स्थान प्राप्त नहीं था जो उनके आर्थिक योगदान के अनुकूल हो। वे कर चुकाने वाले मुख्य वर्ग थे, जिन पर ऊपरी दोनों वर्णों के भरण-पोषण का भार था। वैदिक कर्मकांडों और यज्ञों में होने वाले भारी खर्च और पशुबलि ने वैश्य वर्ग के भीतर एक अदृश्य असंतोष को जन्म दे दिया था, क्योंकि इससे उनके कृषि कार्य और व्यापारिक हितों को भारी नुकसान पहुँचता था।

वर्ण व्यवस्था के सबसे निचले पायदान पर शूद्र वर्ग स्थित था, जिसकी स्थिति इस काल में अत्यंत सोचनीय और कष्टप्रद हो चुकी थी। शूद्रों को शिक्षा, संपत्ति और धार्मिक अधिकारों से पूरी तरह वंचित कर दिया गया था और उनका एकमात्र कर्तव्य ऊपरी तीन वर्णों की सेवा करना निर्धारित था। इसी कालखंड में समाज में 'अस्पृश्यता' के प्रारंभिक लक्षण भी दिखाई देने लगे थे, जहाँ कुछ अति-निम्न जातियों को मुख्य बस्तियों से दूर रहने पर विवश किया जाता था। इसके अतिरिक्त, महिलाओं की स्थिति में भी इस समय भारी गिरावट आई; उन्हें उपनयन संस्कार और राजनीतिक सभाओं के अधिकारों से वंचित कर दिया गया, जिससे वे पूरी तरह पुरुष सत्ता के अधीन हो गईं।

निष्कर्षतः, बौद्ध धर्म से पूर्व मगध का सामाजिक ढांचा एक अत्यंत बंद, शोषक और गतिहीन व्यवस्था का प्रतिनिधित्व करता था। यज्ञों की जटिलता, अंधविश्वासों की बहुलता और जन्मजात विशेषाधिकारों ने बहुसंख्यक आबादी को हाशिए पर धकेल दिया था। समाज का एक बड़ा हिस्सा—जिसमें वैश्य, शूद्र और महिलाएं शामिल थीं—एक ऐसे वैचारिक और सामाजिक विकल्प की तलाश में था जो उन्हें इस घुटनभरी व्यवस्था से मुक्ति दिला सके। मगध की यही विकृत सामाजिक संरचना और वर्ण व्यवस्था की कठोरता वह मुख्य कारण बनी, जिसने आगे चलकर बौद्ध धर्म जैसी समतावादी और क्रांतिकारी विचारधारा के स्वागत के लिए एक उपजाऊ भूमि तैयार की।

बौद्ध धर्म का उदय और मगध में सामाजिक चेतना का संक्रमण

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में महात्मा बुद्ध का प्राकट्य और बौद्ध धर्म का प्रसार मगध के इतिहास में केवल एक धार्मिक घटना नहीं, बल्कि एक अभूतपूर्व सामाजिक क्रांति थी। बुद्ध के सिद्धांतों ने सदियों से चली आ रही रूढ़िवादी वर्ण व्यवस्था की नींव पर प्रहार किया। उन्होंने इस विचार को पूरी तरह खारिज कर दिया कि कोई व्यक्ति जन्म से पवित्र या अपवित्र होता है, और इसके स्थान पर मनुष्य के कर्म और नैतिक आचरण को उसकी श्रेष्ठता का आधार बनाया। मगध की जनता, जो पुरोहिती कर्मकांडों और जन्म-आधारित भेदभाव की जकड़न से त्रस्त थी, उसे बौद्ध दर्शन में समानता की एक नई और व्यावहारिक किरण दिखाई दी, जिसने पूरे साम्राज्य में वैचारिक चेतना की एक नई लहर पैदा कर दी।

इस सामाजिक संक्रमण का सबसे बड़ा माध्यम बौद्ध 'संघ' बना, जिसने समाज के लोकतांत्रिकरण में एक ऐतिहासिक भूमिका निभाई। संघ के द्वार सभी वर्णों, जातियों और वर्गों के लिए समान रूप से खुले हुए थे। जब कोई व्यक्ति संघ में प्रवेश करता था, तो उसकी पुरानी जातिगत पहचान, ऊंच-नीच का भेद और कुल का अहंकार पूरी तरह समाप्त हो जाता था, ठीक वैसे ही जैसे नदियाँ समुद्र में मिलकर अपना अस्तित्व खो देती हैं। एक पूर्व राजा और एक पूर्व दास संघ के भीतर भाईचारे के साथ एक ही धरातल पर बैठते थे। इस व्यवस्था ने मगध के जनमानस को यह सोचने पर विवश किया कि यदि आध्यात्मिक जगत में सब समान हो सकते हैं, तो व्यावहारिक समाज में यह भेदभाव क्यों होना चाहिए।

इस काल में चेतना का संक्रमण महिलाओं की सामाजिक स्थिति में आए बदलावों से भी स्पष्ट रूप से झलकता है। बुद्ध ने भारी हिचकिचाहट और आनंद के आग्रह के बाद महिलाओं को संघ में प्रवेश की अनुमति देकर 'भिक्षुणी संघ' की स्थापना की। प्राचीन भारतीय इतिहास में यह एक युगांतरकारी कदम था, जिसने महिलाओं को पुरुष सत्ता और पारिवारिक बंधनों से मुक्त होकर स्वतंत्र रूप से आध्यात्मिक और बौद्धिक विकास करने का अवसर दिया। 'थेरीगाथा' जैसे बौद्ध ग्रंथ इस बात के जीवंत प्रमाण हैं कि कैसे समाज के विभिन्न वर्गों से आई महिलाओं ने उच्च बौद्धिक स्तर प्राप्त किया। इस क्रांतिकारी बदलाव ने मगध के समाज में महिलाओं के प्रति दृष्टिकोण को बदलने और उन्हें एक स्वतंत्र इकाई के रूप में स्थापित करने में मदद की।

यह संक्रमण केवल समाज के निचले तबकों तक सीमित नहीं था, बल्कि इसने मगध के बौद्धिक और राजनीतिक नेतृत्व को भी गहरे स्तर पर प्रभावित किया। बिंबिसार और अजातशत्रु जैसे मगध के शक्तिशाली शासकों ने बौद्ध धर्म को राजकीय संरक्षण देकर यह स्पष्ट कर दिया कि साम्राज्य की नई नीति रूढ़िवादिता के स्थान पर तार्किकता और लोक-कल्याण पर आधारित होगी। भाषा के स्तर पर भी एक बड़ा संक्रमण हुआ; बुद्ध ने अपने उपदेशों के लिए कुलीन वर्ग की क्लिष्ट संस्कृत के स्थान पर जनसामान्य की भाषा 'पालि' को चुना। इसने ज्ञान के बंद द्वारों को आम जनता के लिए खोल दिया, जिससे समाज का बौद्धिक सशक्तिकरण हुआ और दबे-कुचले वर्गों में अपने अधिकारों के प्रति एक नई चेतना जाग्रत हुई।

संक्षेप में, बौद्ध धर्म का उदय मगध के लिए अंधकार से प्रकाश की ओर बढ़ने का एक ऐतिहासिक संधिकाल था। इसने स्थापित ब्राह्मणवादी श्रेष्ठता को तार्किकता की कसौटी पर कसा और समाज को अंधविश्वासों से मुक्त होने की प्रेरणा दी। जन्म के स्थान पर कर्म की महत्ता, संघ के माध्यम से समानता का व्यावहारिक प्रयोग, महिलाओं का सशक्तिकरण और जनभाषा का सम्मान—इन सभी कारकों ने मिलकर मगध में एक ऐसे गतिशील और प्रगतिशील समाज का निर्माण किया, जिसने पुरानी व्यवस्था को पूरी तरह बदल दिया। यही सामाजिक चेतना का संक्रमण था जिसने मगध साम्राज्य को न केवल राजनीतिक रूप से, बल्कि वैचारिक और मानवीय दृष्टिकोण से भी तत्कालीन भारत का सबसे अग्रणी और गौरवशाली केंद्र बना दिया।

आर्थिक परिवर्तन और वैश्य वर्ग का नया सामाजिक उत्थान

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में मगध साम्राज्य ने आर्थिक धरातल पर एक युगांतरकारी परिवर्तन देखा, जिसे इतिहास में 'द्वितीय नगरीकरण' के नाम से जाना जाता है। लोहे के व्यापक उपयोग ने कृषि क्षेत्र में क्रांति ला दी, जिससे अधिशेष उत्पादन संभव हुआ। इस कृषि अधिशेष ने व्यापार और वाणिज्य को अभूतपूर्व गति दी, जिसके परिणामस्वरूप राजगीर, पाटलिपुत्र, चंपा और वैशाली जैसे समृद्ध व्यापारिक नगरों का तेजी से विकास हुआ। आर्थिक गतिविधियों के इस केंद्र बिंदु में वैश्य वर्ग था, जिसने कृषि, शिल्प और दीर्घकालिक व्यापार को संचालित करके मगध की आर्थिक रीढ़ को सुदृढ़ किया।

इस आर्थिक समृद्धि के परिणामस्वरूप सिक्कों का प्रचलन शुरू हुआ, जिन्हें 'आहत सिक्के' या पंचमार्क सिक्के कहा जाता है। सिक्कों के इस नियमित लेन-देन और ऋण व्यवस्था (ब्याज पर धन देना) ने व्यापारिक गतिविधियों को वैश्विक और सुगम बना दिया। इस काल में वैश्य व्यापारियों ने स्वयं को शक्तिशाली संगठनों में संगठित किया, जिन्हें 'श्रेणी' या गिल्ड कहा जाता था। इन श्रेणियों के प्रधान, जिन्हें 'श्रेष्ठी' या 'सेठ' कहा जाता था, आर्थिक रूप से इतने शक्तिशाली हो चुके थे कि वे राज्य की प्रशासनिक और राजकोषीय नीतियों को प्रभावित करने की क्षमता रखते थे।

आर्थिक रूप से अत्यंत संपन्न और शक्तिशाली होने के बावजूद, वैश्य वर्ग को पारंपरिक ब्राह्मणवादी सामाजिक व्यवस्था में वह सम्मान और स्थान प्राप्त नहीं था, जिसके वे अधिकारी थे। धर्मशास्त्रों में समुद्र यात्रा करने और ब्याज पर धन देने जैसे आवश्यक व्यापारिक कार्यों को पाप या हीन कृत्य माना जाता था, जिससे वैश्यों की सामाजिक स्थिति हमेशा संदेहास्पद बनी रहती थी। ब्राह्मणवादी समाज की इस संकीर्णता ने वैश्य वर्ग के भीतर एक गहरे असंतोष और सामाजिक हीनता की भावना को जन्म दिया था, क्योंकि वे आर्थिक रूप से समाज के पोषक होने के बाद भी पदानुक्रम में तीसरे स्थान पर थे।

ऐसी स्थिति में बौद्ध धर्म का उदय वैश्य वर्ग के लिए एक महान सामाजिक वरदान सिद्ध हुआ। बुद्ध ने अपने दर्शन में समुद्र यात्रा, व्यापार और न्यायसंगत ऋण व्यवस्था का न केवल समर्थन किया, बल्कि इसे समाज के विकास के लिए आवश्यक माना। बौद्ध धर्म ने जन्म-आधारित श्रेष्ठता को नकार कर कर्म और योग्यता को महत्व दिया, जिससे वैश्यों को अपनी धन-संपदा के बल पर समाज में एक नया और प्रतिष्ठित स्थान बनाने का अवसर मिला। इसके बदले में, अनाथपिंडक और विशाखा जैसे समृद्ध वैश्य व्यापारियों ने बौद्ध संघ को खुले दिल से भूमि, विहार और विपुल धन दान में दिया, जिससे इस नए धर्म का तेजी से प्रसार हुआ।

निष्कर्षतः, मगध के आर्थिक परिवर्तनों और बौद्ध धर्म के अंतर्संबंधों ने वैश्य वर्ग को सामाजिक गतिशीलता की एक नई ऊँचाई पर पहुँचा दिया। व्यापारिक श्रेणियों के उदय और बौद्ध धर्म के उदार दृष्टिकोण ने पारंपरिक वर्ण व्यवस्था के कठोर

ढांचे को शिथिल कर दिया। वैश्यों का यह नया सामाजिक उत्थान इस बात का जीवंत प्रमाण था कि अब मगध का समाज जन्मजात अधिकारों से मुक्त होकर आर्थिक योग्यता और कर्म को वरीयता देने लगा था। इस प्रकार, आर्थिक समृद्धि और वैधानिक धार्मिक संरक्षण के मेल ने वैश्य वर्ग को मगध साम्राज्य की सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था का एक अत्यंत प्रभावशाली और सम्मानीय स्तंभ बना दिया।

निम्न वर्गों (शूद्रों) एवं महिलाओं की स्थिति: एक तुलनात्मक अध्ययन

बौद्ध धर्म से पूर्व और बौद्ध कालीन मगध में निम्न वर्गों (शूद्रों) तथा महिलाओं की स्थिति का तुलनात्मक अध्ययन सामाजिक न्याय के दृष्टिकोण से अत्यंत महत्वपूर्ण है। बौद्ध धर्म के उदय से पहले, ब्राह्मणवादी वर्ण व्यवस्था के चरम उत्कर्ष के कारण शूद्रों की दशा अत्यंत दयनीय और अमानवीय हो चुकी थी। उन्हें शिक्षा, संपत्ति के संचय और धार्मिक अनुष्ठानों से पूरी तरह वंचित कर समाज के सबसे निचले पायदान पर रख दिया गया था। इसी प्रकार महिलाओं की स्थिति में भी निरंतर गिरावट आ रही थी; उन्हें पुरुष सत्ता के अधीन कर दिया गया था और उपनयन संस्कार तथा वेदों के अध्ययन जैसे अधिकारों से वंचित कर उनका कार्यक्षेत्र केवल घर की चहारदीवारी तक सीमित कर दिया गया था।

महात्मा बुद्ध के आगमन और बौद्ध दर्शन के प्रसार ने इन दोनों वंचित वर्गों के प्रति सामाजिक दृष्टिकोण में एक व्यापक और क्रांतिकारी बदलाव लाया। बौद्ध संघ की स्थापना ने सामाजिक समानता का एक ऐसा व्यावहारिक ढांचा प्रस्तुत किया, जिसने शूद्रों और अछूत माने जाने वाले वर्गों के लिए गरिमापूर्ण जीवन के द्वार खोल दिए। संघ के नियमों के अनुसार जन्मजात जाति का कोई महत्व नहीं था, जिससे उपाली जैसे नाई और सुनिधि जैसे सफाईकर्मी भी अपनी योग्यता के बल पर उच्च आध्यात्मिक पद और समाज में परम आदरणीय स्थान प्राप्त करने में सफल रहे। यह बौद्ध धर्म पूर्व की उस व्यवस्था पर सीधा प्रहार था जहाँ शूद्रों का एकमात्र कार्य केवल सेवा करना तय था।

महिलाओं के संदर्भ में भी बौद्ध धर्म का दृष्टिकोण पारंपरिक मान्यताओं की तुलना में कहीं अधिक प्रगतिशील और सहिष्णु सिद्ध हुआ। बुद्ध द्वारा 'भिक्षुणी संघ' की स्थापना ने महिलाओं को घरेलू दायित्वों, बाल-विवाह के बंधनों और पुरुष निर्भरता से मुक्त होकर एक स्वतंत्र आध्यात्मिक जीवन जीने का ऐतिहासिक अधिकार दिया। बौद्ध साहित्य के अंतर्गत 'थेरीगाथा' नामक ग्रंथ उन भिक्षुणियों के आत्म-अनुभवों और उच्च बौद्धिक चेतना का जीवंत दस्तावेज है, जिन्होंने समाज के बंधनों को तोड़कर निर्वाण प्राप्त किया। महिलाओं को संघ में प्रवेश मिलना इस बात का स्पष्ट प्रमाण था कि बौद्ध काल में उन्हें आध्यात्मिक और मानसिक रूप से पुरुषों के समकक्ष स्वीकार किया जाने लगा था।

हालांकि, इस तुलनात्मक अध्ययन का एक व्यावहारिक पक्ष यह भी दिखाता है कि संघ के भीतर क्रांतिकारी बदलावों के बावजूद व्यावहारिक समाज में रूढ़ियाँ रातों-रात पूरी तरह समाप्त नहीं हुईं। संघ के बाहर के आम सामाजिक और पारिवारिक जीवन में शूद्रों और महिलाओं को अभी भी कुछ हद तक पुरानी व्यवस्था और पितृसत्तात्मक दबावों का सामना करना पड़ता था। स्वयं बुद्ध ने भी सामाजिक संतुलन बनाए रखने के लिए दासों, ऋणी व्यक्तियों और माता-पिता की आज्ञा के बिना स्त्रियों के संघ में प्रवेश पर कुछ सीमाएँ लगाई थीं। इसके बावजूद, यह निश्चित है कि बौद्ध धर्म ने इन दोनों वर्गों को जो वैचारिक संबल और आत्मसम्मान प्रदान किया, वह पूर्ववर्ती काल में अकल्पनीय था।

अंततः, शूद्रों और महिलाओं की स्थिति का यह तुलनात्मक विश्लेषण यह प्रमाणित करता है कि बौद्ध काल में मगध का समाज अपनी पुरानी संकीर्णता से मुक्त हो रहा था। पूर्व काल की जन्म-आधारित हीनता को बौद्ध काल में कर्म-आधारित योग्यता से प्रतिस्थापित किया गया, जिसने समाज के हाशिए पर खड़े इन दोनों अंगों को अपनी पहचान स्थापित करने का अवसर दिया। बौद्ध धर्म ने शूद्रों को अछूत होने के कलंक से और महिलाओं को केवल भोग और दासी की वस्तु समझने की मानसिकता से मुक्त कराने में उत्प्रेरक का कार्य किया। यही कारण है कि मगध का यह कालखंड भारतीय इतिहास में सामाजिक समरसता और मानवाधिकारों के प्रारंभिक उत्थान का एक स्वर्णिम अध्याय माना जाता है।

सामाजिक गतिशीलता और मगध की प्रगतिशीलता

छठी शताब्दी ईसा पूर्व में मगध साम्राज्य में देखी गई सामाजिक गतिशीलता और उसकी अंतर्निहित प्रगतिशीलता ने उसे तत्कालीन भारत के अन्य महाजनपदों की तुलना में एक विशिष्ट पहचान प्रदान की। बौद्ध धर्म से पूर्व जहाँ सामाजिक व्यवस्था एक बंद और गतिहीन ढांचे में तब्दील हो चुकी थी, वहीं बौद्ध काल में इस जकड़न में एक बड़ा बिखराव आया। सामाजिक गतिशीलता से तात्पर्य समाज के विभिन्न वर्णों और जातियों के लोगों को अपनी सामाजिक स्थिति, व्यवसाय और प्रतिष्ठा में बदलाव करने की स्वतंत्रता मिलने से है। मगध की भौगोलिक स्थिति, नवीन आर्थिक शक्तियों और बौद्ध धर्म की उदार विचारधारा ने मिलकर इस गतिशीलता को संभव बनाया, जिसने समाज को रूढ़िवादिता से प्रगतिशीलता की ओर धकेला। इस सामाजिक गतिशीलता का सबसे प्रत्यक्ष प्रमाण रूढ़िवादी वर्ण-व्यवस्था के नियमों का शिथिल होना था। बौद्ध धर्म ने जन्मजात श्रेष्ठता के सिद्धांत को पूरी तरह नकार दिया, जिससे समाज के निचले स्तर पर स्थित व्यक्तियों के लिए ऊपर उठने के मार्ग खुल गए। अब कोई व्यक्ति केवल एक विशेष कुल में पैदा होने के कारण सम्मान का पात्र नहीं रह गया था, बल्कि उसकी योग्यता, ज्ञान और सदाचार ही उसकी सामाजिक प्रतिष्ठा का मुख्य पैमाना बन गए थे। इस वैचारिक परिवर्तन ने विभिन्न जातियों के बीच के अलगाव को कम किया और समाज के विभिन्न अंगों को एक-दूसरे के करीब आने तथा अंतर्क्रिया करने का अवसर दिया, जो प्रगतिशील समाज का मूल लक्षण है।

व्यवसायिक गतिशीलता भी इस कालखंड की एक अत्यंत महत्वपूर्ण विशेषता रही। बौद्ध धर्म से पूर्व प्रत्येक व्यक्ति का व्यवसाय उसकी जाति से तय होता था, लेकिन इस संक्रमण काल में लोगों को अपनी इच्छा और आर्थिक लाभ के अनुसार नए व्यवसायों को चुनने की स्वतंत्रता मिली। क्षत्रियों और ब्राह्मणों ने जहाँ व्यापार और कृषि गतिविधियों में रुचि दिखाई, वहीं वैश्यों और शूद्रों ने भी समाज के बौद्धिक, धार्मिक और प्रशासनिक क्षेत्रों में अपनी मजबूत उपस्थिति दर्ज कराई। इस व्यावसायिक लचीलेपन ने न केवल आर्थिक उत्पादन को बढ़ाया, बल्कि समाज के विभिन्न वर्गों के बीच पाए जाने वाले हीनता और श्रेष्ठता के बोध को भी कम करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

मगध की प्रगतिशीलता उसके शासकों की नीतियों और बौद्ध संघ के व्यावहारिक प्रयोगों में भी स्पष्ट रूप से दिखाई देती है। बिंबिसार और अजातशत्रु जैसे मगध के सम्राटों ने रूढ़िवादी परंपराओं के दबाव में आए बिना योग्यता को प्राथमिकता दी और बौद्ध धर्म जैसी समतावादी विचारधारा को राजकीय संरक्षण प्रदान किया। पालि जैसी लोकभाषा को ज्ञान और उपदेश का माध्यम बनाना मगध की इसी प्रगतिशील चेतना का हिस्सा था, जिसने शिक्षा और बौद्धिक विमर्श पर कुलीन वर्ग के एकाधिकार को समाप्त कर दिया। इसके अतिरिक्त, महिलाओं और वंचित वर्गों को संघ में स्थान देकर समाज के लोकतांत्रिकरण की जो शुरुआत हुई, वह मगध की उन्नत सोच का परिचायक थी।

निष्कर्षतः, सामाजिक गतिशीलता और प्रगतिशीलता के इस अंतर्संबंध ने मगध को प्राचीन भारत का सबसे जीवंत और आधुनिक चेतना से युक्त केंद्र बना दिया। मगध का समाज एक ऐसे पड़ाव पर पहुँच चुका था जहाँ पुरानी व्यवस्था के बंधनों को तोड़कर नए, व्यावहारिक और मानवीय मूल्यों को अपनाया जा रहा था। इस गतिशीलता ने समाज के हर वर्ग को अपनी आंतरिक क्षमता का प्रदर्शन करने का अवसर दिया, जिससे साम्राज्य का सर्वांगीण विकास हुआ। अतः, मगध की यह प्रगतिशीलता केवल एक सामयिक बदलाव नहीं थी, बल्कि इसने आने वाली सदियों के लिए एक समतावादी, तार्किक और गतिशील समाज की मजबूत आधारशिला रखने का ऐतिहासिक कार्य किया।

निष्कर्ष

मगध साम्राज्य की सामाजिक स्थिति का बौद्ध धर्म से पूर्व और बौद्ध धर्म के समय का यह व्यापक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि छठी शताब्दी ईसा पूर्व का यह कालखंड भारतीय इतिहास का एक अत्यंत क्रांतिकारी संधिकाल था। बौद्ध धर्म के उदय से पूर्व, मगध का समाज उत्तर-वैदिक कालीन कठोर वर्ण व्यवस्था, पुरोहिती वर्चस्व और जटिल कर्मकांडों की जकड़न में फंसा हुआ था, जहाँ मनुष्य का मूल्य उसकी योग्यता से नहीं बल्कि उसके जन्म से आंका जाता था। इस रूढ़िवादी व्यवस्था

ने वैश्यों में असंतोष पैदा किया तथा शूद्रों और महिलाओं को सामाजिक और धार्मिक अधिकारों से वंचित कर पूरी तरह हाशिए पर धकेल दिया था।

इस दमघोंटू सामाजिक परिवेश में महात्मा बुद्ध का प्राकट्य और बौद्ध दर्शन का प्रसार एक महान तार्किक और मानवीय विकल्प बनकर उभरा। बुद्ध द्वारा प्रतिपादित कर्म-आधारित श्रेष्ठता के सिद्धांत ने स्थापित वर्ण व्यवस्था की नींव को हिलाकर रख दिया। बौद्ध संघ की लोकतांत्रिक और समतावादी संरचना ने जातिगत भेदभाव की दीवारों को पूरी तरह ढहा दिया, जिससे समाज के वंचित और शोषित वर्गों को गरिमापूर्ण जीवन जीने का अधिकार मिला। इस वैचारिक क्रांति ने प्राचीन भारतीय समाज को अंधविश्वासों और रूढ़ियों से मुक्त कर तार्किकता और बंधुत्व के एक नए धरातल पर स्थापित किया।

इस सामाजिक रूपांतरण में आर्थिक परिवर्तनों, विशेषकर द्वितीय नगरीकरण और व्यापारिक श्रेणियों के उदय ने एक सहायक उत्प्रेरक की भूमिका निभाई। आर्थिक रूप से सशक्त हो चुके वैश्य वर्ग को बौद्ध धर्म के रूप में एक ऐसा वैधानिक मंच मिला, जिसने उन्हें पारंपरिक समाज में उपेक्षित रहने के बाद एक नई और सुदृढ़ सामाजिक प्रतिष्ठा प्रदान की। इसके साथ ही, भिक्षुणी संघ की स्थापना ने महिलाओं को पितृसत्तात्मक बंधनों से मुक्त होकर स्वतंत्र अस्तित्व और उच्च बौद्धिक चेतना प्राप्त करने का ऐतिहासिक अवसर दिया, जो तत्कालीन वैश्विक परिदृश्य में भी एक अत्यंत प्रगतिशील कदम था।

अध्ययन यह भी रेखांकित करता है कि वैचारिक धरातल पर आए इन क्रांतिकारी परिवर्तनों के बावजूद व्यावहारिक समाज में पुरानी रूढ़ियाँ और संकीर्णता पूरी तरह समाप्त नहीं हुई थीं। संघ के बाहर के आम जनजीवन में सामाजिक स्तरीकरण और पितृसत्तात्मक प्रभाव किसी न किसी रूप में बने रहे। इसके बावजूद, बौद्ध धर्म ने समाज के सोचने के ढंग और प्राथमिकताओं को बदलने में सफलता प्राप्त की। लोकभाषा पालि के प्रयोग और योग्यता को वरीयता देने की नीति ने शिक्षा और ज्ञान को महलों और आश्रमों से निकालकर आम जनता की चौखट तक पहुँचाने का युगांतरकारी कार्य किया।

अंततः, निष्कर्ष स्वरूप यह कहा जा सकता है कि बौद्ध कालीन मगध का समाज एक बंद और गतिहीन व्यवस्था से निकलकर एक खुले, गतिशील और प्रगतिशील समाज के रूप में परिवर्तित हुआ। सामाजिक गतिशीलता, व्यावसायिक स्वतंत्रता, वंचितों का उत्थान और समतावादी दृष्टिकोण इस कालखंड की स्थायी धरोहर बन गए। मगध साम्राज्य की इसी अद्वितीय प्रगतिशील चेतना और सामाजिक समरसता ने उसे न केवल एक विशाल राजनीतिक शक्ति के रूप में स्थापित होने का आधार दिया, बल्कि उसे प्राचीन भारत का सबसे जीवंत, सहिष्णु और महान सांस्कृतिक व वैचारिक केंद्र भी बना दिया।

ग्रंथ सूची

1. शर्मा, रामशरण (1996). प्राचीन भारत में भौतिक प्रगति और सामाजिक संरचनाएं. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
2. थापर, रोमिला (2008). आदि से अंत तक भारत (भारत का इतिहास). राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
3. शर्मा, रामशरण (2002). शूद्रों का प्राचीन इतिहास. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
4. मुखर्जी, राधाकुमुद (2000). प्राचीन भारत. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
5. झा, द्विजेंद्र नारायण (2012). प्राचीन भारत: एक रूपरेखा. पीपुल्स पब्लिशिंग हाउस, नई दिल्ली.
6. सांकृत्यायन, राहुल (1950). बौद्ध दर्शन. किताब महल, इलाहाबाद.
7. शर्मा, रामशरण (1998). प्राचीन भारत का सामाजिक और आर्थिक इतिहास. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
8. पाण्डेय, गोविंद चंद्र (1999). बौद्ध धर्म के विकास का इतिहास. उत्तर प्रदेश हिंदी संस्थान, लखनऊ.
9. कोशाम्बी, दामोदर धर्मानंद (2002). प्राचीन भारतीय संस्कृति और सभ्यता की रूपरेखा. राजकमल प्रकाशन, नई दिल्ली.
10. राय, उदय नारायण (1994). मगध साम्राज्य का उदय. लोकभारती प्रकाशन, इलाहाबाद.
11. गोयल, श्रीराम (2001). प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास. कुसुमांजलि प्रकाशन, जोधपुर.
12. पाण्डेय, राजबली (2014). प्राचीन भारत. मोतीलाल बनारसीदास, नई दिल्ली.

13. मिश्र, जयशंकर (2005). प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास. बिहार हिंदी ग्रंथ अकादमी, पटना.
14. वर्मा, के. सी. (2018). "छठी शताब्दी ईसा पूर्व में मगध का सामाजिक संक्रमण और बौद्ध धर्म", इतिहास शोध पत्रिका, अंक 12, पृष्ठ 45-58.
15. कुमार, सतीश (2021). "द्वितीय नगरीकरण और वैश्य वर्ग का सामाजिक उत्थान: एक ऐतिहासिक विश्लेषण", भारतीय इतिहास अनुसंधान परिषद (ICHR) पत्रिका, वर्ष 15, पृष्ठ 112-125.